श्रावकप्रवर श्री गुलाबचन्दजी लूनिया

जन्म : संवत् 1934 : स्वर्गवास : संवत् 1996

(15 अक्टूबर, 1878) (7 फरवरी, 1940)

# धर्मनिष्ठ तत्त्वज्ञ श्रावकप्रवर
# श्री गुलाबचन्दजी लूनिया

(संक्षिप्त जीवन–परिचय)

गुलाबी नगर जयपुर को बसाने के बाद महाराज जयसिंह ने विभिन्न स्थानों से विद्वानों, व्यापारियों, धार्मिक महापुरुषों तथा कलामर्मज्ञों को जयपुर में आकर बसने का अह्वान किया था। श्री गोरूमलजी लूनिया को भी दिल्ली से जयपुर बुलाया गया। उन्होंने यहाँ आकर गोरूमल चौथमल के नाम से जवाहरात की गद्दी स्थापित की तथा जौहरी बाजार में कुण्डीगर भैरूंजी के रास्ते में एक हवेली बनाई जो आज लूनिया की हवेली कहलाती है। यहाँ लूनिया परिवार वर्तमान में रहता है।

गौरूमल जी के छोटे पुत्र गणेशमलजी के द्वितीय पुत्र के रूप में श्री गुलाबचन्दजी ने संवत् 1934 में जन्म लिया। नीति, निष्ठा, ईमानदारी और धर्माचरण उन्हें विरासत में मिले। गौरूमल जी ने संवत् 1985 में तेरापंथ धर्मसंघ के चतुर्थ आचार्य श्रीमद्जयाचार्य के जयपुर चातुर्मास में उन्होंने तेरापंथ की गुरु धारणा ली। बाल्यकाल से ही उनकी रुचि धर्मचर्चा तथा साधु-साध्वियों की सेवा में अधिक थी। सुन्दर, सरस और तात्त्विक ढालें तो वे 17 वर्ष की आयु में ही बनाने लगे थे। मृदुभाषी, मिलनसार एवं सेवाभावी थे। सांसारिक कार्यों में उनका मन कम ही लगता था। मन प्रायः दीक्षा के लिए लालायित रहने लगा था; अतः उनका मानस बदलने की दृष्टि से 14 वर्ष की अल्प आयु में ही भोपाल राज्य के खजांची श्री चुन्नीलालजी कोठारी की सुपुत्री मेहताब कुमारी के साथ उनका विवाह कर दियागया। वे भी अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्ति की आस्थाशील गृहिणी थीं। युवावस्था में ही दोनों पति-पत्नी ने तेरापंथ के अष्टम आचार्य श्री कालूगणी से श्रावक के बारहव्रत ग्रहण कर लिये थे। धर्माराधना, सामायिक तथा व्रत-पच्चखाण आदि के साथ नवदम्पती ने जीवन यात्रा आरम्भ की थी।

गुलाबचन्दजी के दो पुत्र एवं दो पुत्रियाँ हुयीं। प्रथम संतान, खरतरगच्छ संघ की यशस्विनी साध्वी प्रवर्तिनी श्री सज्जनश्री जी आपकी ही पुत्री थीं। सज्जनश्री जी को धार्मिक संस्कार अपने पिताश्री से ही प्राप्त हुए थे। आगम मर्मज्ञा प्रवर्तनी श्री सज्जनश्री जी ने एक कर्मठ तपस्विनी साधिका, शास्त्रज्ञा, गुरु सेविका एवं गुरुवर्या के रूप में ख्याति अर्जित की।

## श्रावक आराधना

जयपुर के जौहरी समाज में धर्मनिष्ठ श्रावक श्री गुलाबचन्दजी की सत्यनिष्ठा और ईमानदारी की अच्छी छाप थी। जयपुर के तत्कालीन प्रधानमंत्री सर मिर्जा इस्माइल ने आपको एम.आई. रोड़ पर एक भू-खण्ड आवंटित किया। आपने वहाँ जवाहरात का एक भव्य शोरूम खोला तथा उद्यान लगाया जो 'लूनियों के बाग' के नाम से विख्यात हुआ। व्यापार में अच्छी वृद्धि हुयी तो चतुर्दिक प्रतिष्ठा भी बढ़ने लगी। रियासत के बड़े-बड़े अधिकारियों से अच्छे सम्बन्ध बने तो देश-भर के प्रतिष्ठित जौहरियों से आपके पारस्परिक सम्बन्ध बन गये। एडवर्ड सप्तम के पुत्र पंचम जार्ज-प्रिन्स आव वेल्स के दिल्ली आगमन पर आयोजित समारोह में आपने प्रतिष्ठित जौहरी के रूप में भाग लिया। उनकी ओर से आपको प्रमाण-पत्र भी प्राप्त हुये। जयपुर के महाराजा के दरबार में आपकी भी कुर्सी लगती थी।

व्यापार, समाज, राज्य और परिवार के क्षेत्र में श्रेष्ठतम जीवन की गरिमा के बावजूद श्रावक श्रेष्ठ गुलाबचन्दजी का हृदय सदैव धर्म की धुरी पर ही केन्द्रित रहा। वे एक धर्मनिष्ठ गृहस्थ-साधु थे। दिगम्बर, श्वेताम्बर मान्यताओं की सभी आम्नाय के आचार्य उनका मान करते थे। सामुदायिक संकीर्णता से वे बहुत दूर थे। वे मात्र औपचारिक श्रावक नहीं थे, अपितु एक महान् तत्त्वज्ञानी, स्वाध्यायी एवं भक्त श्रावक थे।

तेरापंथ के पाँचवें आचार्य श्री मघवागणी से लेकर नौवें आचार्य श्री तुलसी तक पाँच आचार्यों की निकट सेवा का अवसर आपको मिला था। उल्लेखनीय है कि जर्मन दार्शनिक हमर्न जेकोबी सर्वप्रथम आपके सम्पर्क में आये और आपने ही उनको जैन दर्शन, जैन आचार, आचार्य भिक्षु के तत्त्वदर्शन आदि विस्तार से समझाये।

श्री लूनिया जी एक भावमर्मज्ञ, भक्तिरसिक, संगीतज्ञ एवं कविहृदय थे। कविता उनके हृदय से फूटती थी और स्वर-साधना उनके कण्ठ में निरन्तर प्रवहमान रहती थी।

जयपुर में विराजित जैन आचार्यों की सभाओं में तथा मंदिरों में आयोजित उत्सवों आदि में उनके भजनों के कार्यक्रम धूमधाम के साथ होते थे। जब भी मोहल्ले के लोगों को मालूम पड़ता कि गुलाबचन्दजी भजन प्रारम्भ करने वाले है तो हजारों की संख्या में लोग आपको सुनने के लिए लोग एकत्र हो जाते। भक्तिरस, तत्त्वज्ञान आदि के लगभग तीन सौ से अधिक भजन, गीतिकाएँ (ढालें) आदि आपने स्वयं रची थीं।

महान् दार्शनिक आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने आपके विषय में कहा है - ''श्री गुलाबचन्दजी प्रथम श्रावक थे जिन्होंने भक्तिभावपूर्ण ढालें, गीतिकाएँ, स्तवन आदि की रचनाएं कीं और भक्तिभाव से विभोर होकर उन्हें गाया था।'' धार्मिक समारोह, अध्यात्मिक जागरण एवं तत्त्व-चर्चाओं में भाग लेने के साथ-साथ श्री लूनियाजी ने अपने स्वरचित तथा अन्य ग्रन्थों का प्रकाशन करवाया। आज भी उनके ग्रन्थ जैन-तत्त्व-दर्शन के प्रामाणिक ग्रन्थ माने जाते हैं। इन ग्रन्थों में मुख्य हैः-

1. भिक्षु यश रसायण 2. नव पदार्थ निर्णय

3. श्रावक धर्म विचार 4. शिशुहित शिक्षा

5. श्रावक आराधना 6. सुगणावली

7. प्रश्नोत्तर तत्त्वबोध आदि।

श्री लूनियाजी के ग्रन्थ प्रकाशन कार्य में सर्वाधिक सहयोग किया उनके अनन्य मित्र, सहयोगी एवं सहधर्मी गंगाशहर के श्री हीरालालजी आंचलिया का। श्री आंचलिया जी भी लूनियाजी की तरह जैन शासन के भक्त श्रावक रहे हैं। वे प्रथम श्रावक थे जिन्होंने धार्मिक ग्रन्थों को शुद्ध करवाया, छपवाया और धर्म चेतना जाग्रत करने हेतु साहित्य का निःशुल्क वितरण करवाया। वे ग्रन्थ-प्रकाशन कार्य हेतु प्रायः गंगाशहर से जयपुर आया करते थे।

श्री लूनियाजी स्वच्छ रूचि के श्वेत परिधानयुक्त सरल, आध्यात्मिक हृदय वाले, स्वार्थरहित व्यक्तित्व के धनी थे। वे अपने पीछे दो पुत्र तथा दो पुत्रियों के अलावा प्रचुर यश-मान, कीर्ति, ऐश्वर्य, प्रभावना, वैभव, प्रतिष्ठा और अनेक कालजयी कृतियाँ छोड़कर वि.सं. 1996 की माघ शुक्ला द्वितीया को स्वर्गलोक सिधार गए।

किन्तु; अपनी सम्पूर्ण जीवंतता के साथ आज भी वे हमारे बीच विद्यमान हैं।

# अनन्य मित्र व सहयोगी श्री हीरालालजी आंचलिया

जयपुर के श्री गुलाबचन्दजी लूनिया तथा गंगाशहर के श्री हीरालालजी आंचलिया, दोनों ही तेरापंथ धर्मसंघ के वरिष्ठ सदस्य थे। प्रति वर्ष वे मर्यादा महोत्सव के अवसर पर अवश्य मिलते तथा विभिन्न विषयों पर विचार-विमर्श करते। पत्र-व्यवहार के माध्यम से भी दोनों का सम्पर्क निरन्तर बना रहता। श्री लूनियाजी जैसे कवि और गायक थे, वैसे ही आंचलियाजी भी साहित्य रसिक व अच्छे सृजनकार थे। दोनों ने मिलकर अनेक ग्रन्थों की रूपरेखा तैयार की तथा उसको समय पर मुद्रित करवाकर समाज के सामने रखा। आज भी इनके ग्रन्थ रुचि के साथ पढ़े जाते हैं। श्री हीरालालजी आंचलिया जो भी चिन्तन प्रस्तुत करते, लूनियाजी उसको छन्दों और गीतिकाओं में ढाल देते। तत्त्वज्ञान, स्वाध्याय और भक्ति बढ़ाने में दोनों ने मिलकर जो कार्य किया वह तेरापंथ धर्मसंघ के इतिहास में उल्लेखनीय बन गया।

श्री आंचलिया जी ने अपनी गंगाशहर की हवेली में एक सूत्र-धर बना रखा था। साधु-साध्वी व स्वाध्याय प्रेमी वहाँ से अध्ययन हेतु ग्रन्थ ले जाया करते थे। कोई भी सूत्र-ग्रन्थ देने से पहले वे लेने वाले की योग्यता की परख किया करते थे। यहाँ तक कि एक बार आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी (जब वे मुनि नथमल जी थे) भी जब उनके पास ग्रन्थ लेने के लिए पहुँचे तो आंचलिया जी ने उनको भी परीक्षा लेने के बाद ही ग्रन्थ दिया था। इससे ज्ञात होता है वे ज्ञान के प्रसार में गहरी रुचि रखते थे।

तत्त्व और अध्यात्म की गहराई में अवगाहन करने वाले वे दोनों महान् श्रावक जीवन भर धर्मसंघ की सेवा करते रहे। दोनों ही सरलहृदयी एवं उदात्त विचारों के आदर्श श्रावक थे, देव-गुरु-धर्म के प्रति पूर्णरूप से समर्पित।

जयपुर के लूनिया एवं गंगाशहर के आंचलिया परिवार का वह आत्मीय सम्बन्ध प्रगाढ़ और स्थाई बना बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में जब श्री हीरालालजी आंचलिया की प्रपौत्री (रत्ना) और श्री गुलाबचन्दजी लूनिया के पौत्र (पुखराज) वैवाहिक सूत्र में बँध गये। दोनों परिवारों के बीच एक स्थायी सूत्र स्थापित हो गया।

श्री हीरालालजी की रुचि तत्त्व, स्वाध्याय, धार्मिक साहित्य आदि में विशेष थी। अब उनकी परम्परा को आगे बढ़ा रहे हैं उनके पौत्र श्री थानमलजी आंचलिया जो आज ६० वर्ष के हैं तथा प्रारम्भ से ही इनकी रुचि साहित्य सृजन में रही है। विगत २५ वर्षों के अमरीका प्रवास में उनकी कविताओं के संकलन भी प्रकाशित हुए। सन् १६८६ में उन्हें अमेरिकन एसोसियेशन ऑफ पोइट्री एचीवमेंट अवार्ड भी मिल चुका है।

आध्यात्मिक साहित्य के संवर्धन में दोनों परिवारों की सेवाएं सदैव सम्मान की दृष्टि से देखी जायेंगी।